# जीवविचार.

## हिन्दी-भाषानुवाद-सहित.

"बिना किसी विघ्नके इस ग्रन्थके बनानेका काम पूरा हो जाय इस लिये ग्रन्थकार मङ्गलाचरण करते हैं"

भुवणपईवं वीरं,
नमिऊण भणामि अबुहबोहत्थं ।
जीवसरूवं किंचिवि,
जह भणियं पुव्वसूरीहिं ॥ १ ॥

( भुवणपईवं ) संसारमें दीपकके समान, ( वीरं ) भगवान् महावीरको, ( नमिऊण ) नमस्कार करके, ( अबु-हबोहत्थं ) अज्ञ लोगोंको ज्ञान करानेके लिये, (पुव्वसूरीहिं) पुराने आचार्योंने, ( जहभणियं ) जैसा कहा है वैसा, ( जीवसरूवं ) जीवका स्वरूप, ( किंचिवि ) संक्षेपसे, ( भणामि ) मैं कहता हूँ ॥ १ ॥

प्रश्न—जीवका स्वरूप जाननेसे क्या लाभ है ?

उत्तर—उनको हम अपनी आत्माके समान समझ कर

उनसे बर्ताव करें— उनको तकलीफ न पहुँचावें.

प्र०—यदि हम उनको सतावेंगे तो क्या होगा ?

उ०—वे भी हमें सतावेंगे—बदला लेंगे, इस वक्त कमजोर होनेके सबब वे बदला न ले सकेंगे तो दूसरे जन्ममें लेंगे.

प्र०—भगवान्‌को भुवन-प्रदीप क्यों कहा ?

उ०—जैसे दीपक घट-पट आदि पदार्थोंको प्रकाशित करता है वैसे भगवान् सारे संसारके पदार्थोंको प्रकाशित करते हैं—खुद जानते हैं तथा समवसरणमें औरोंको उपदेश देते हैं—इसलिये उनको भुवन-प्रदीप कहते हैं.

प्र०—यहां अज्ञ किनको समझना चाहिये ?

उ०—जो लोग, जीवके स्वरूपको नहीं जानते उनको.

प्र०—पुराने आचार्य कौन हैं ?

उ०—गौतम स्वामी, सुधर्मा स्वामी आदि.

"अब जीवके भेद कहते हैं"

**जीवा मुत्ता संसा,-**

**रिणो य तसथावरा य संसारी।**

**पुढवी-जल-जलण-वाऊ,-**

---

१-शास्त्रका फरमान है कि-"पढमं नाणं तओ दया, एवं चिट्ठई सव्वसंजए। अन्नाणी किं काही? किंवा नाहीय सेय पावगं?" पहले ज्ञान होगा तब ही अहिंसाधर्मका पालन हो सक्ता है.।

वणस्सई थावरा नेया ॥ २ ॥

( जीवा ) जीव, ( मुत्ता ) मुक्त ( य ) और ( संसारिणो ) संसारी हैं. ( तस ) त्रस जीव, ( य ) और ( थावरा ) स्थावर जीव, ( संसारी ) संसारी हैं. ( पुढवी जल जलण वाऊ वणस्सई ) पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पतिको ( थावरा ) स्थावर ( नेया ) जानना ॥ २ ॥

भावार्थ—जीवके दो भेद हैं;—मुक्त और संसारी. संसारी जीवके दो भेद हैं:—त्रस और स्थावर. स्थावर जीवके पाँच भेद हैं;—पृथ्वीकाय, जलकाय—अप्काय, अग्निकाय—तेजःकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय.

प्र०—जीव किसको कहते हैं ?

उ०—जो प्राणोंको धारण करे. प्राण दो तरहके हैं, भाव-प्राण और द्रव्य-प्राण. चेतनाको भाव-प्राण कहते हैं. पाँच इन्द्रियाँ—आँख, जीभ, नाक, कान और त्वचा; त्रिविध बल—मनोबल, वचनबल और कायबल; श्वासोच्छ्वास और आयु ये दस द्रव्य-प्राण हैं.

प्र०—मुक्त किसको कहते हैं ?

उ०—जिसका जन्म और मरण न होता हो—जो जीव, जन्म-मरण से छूट गया हो.

प्र०—संसारी किसको कहते हैं ?

उ०-जो जीव जन्म-मरणके चक्करमें फँसा हो.

प्र०—त्रस किसको कहते हैं ?

उ०-जो जीव, सर्दी-गरमीसे अपना बचाव करनेके लिये चल-फिर सके, वह त्रस ।

प्र०-स्थावर किसको कहते हैं ?

उ०-जो जीव सर्दी-गरमीसे अपना बचाव करनेके लिये चल-फिर न सके, वह स्थावर ।

प्र०-पृथ्वीकाय आदिका क्या अर्थ है ?

उ०-कायका अर्थ है शरीर; जिस जीवका शरीर पृथ्वी का हो, वह पृथ्वीकाय; जिसका शरीर जलका हो, वह जलकाय; जिसका अग्निका हो, वह अग्निकाय; जिसका वायुका हो, वह वायुकाय; जिसका वनस्पतिका हो, वह वनस्पतिकाय.

---

" दो गाथाओंसे पृथ्वीकायके भेद कहते हैं ."

फलिहमणि-रयण-विद्दुम-,
हिंगुल-हरियाल-मणसिल-रसिंदा ।
कणगाइ-धाउ-सेढी-,
वन्निअ-अरणेट्टय-पलेवा ॥ ३ ॥
अब्भय-तूरी-ऊसं, मट्टी-पाहाण-जाइओ णेगा।
सोवीरंजण-लूणा,—इ पुढवि-भेआइ इच्चाई ॥ ४॥

( फलिह ) स्फटिक, (मणि) मणि–चन्द्रकान्त आदि, ( रयण ) रत्न–वज्रकर्केतन आदि, ( विद्दुम ) मूंगा, ( हिंगुल ) हिङ्गुल–ईंगुर, (हरियाल) हरताल, ( मणसिल ) मैनसिल–मनःशिला, ( रसिंद ) रसेन्द्र–पारा–पारद, ( कणगाइ धाउ ) कनक आदि धातु–सोना, चान्दी, ताम्बा, लोहा, राँगा, सीसा और जस्ता, ( सेढ़ी ) खटिका–खड़िया, (वन्निअ) वर्णिका–लाल रङ्गकी मिट्टी, ( अरणेट्टय ) अरणेट्टक–पत्थरोंके टुकड़ोंसे मिली हुई सफेद मिट्टी, ( पलेवा ) पलेवक–एक किस्मका पत्थर ॥ ३ ॥ (अब्भय) अभ्रक–अवरक, ( तूरी ) एक किस्मकी मिट्टी, ( ऊसं ) क्षार भूमिकी–ऊसरकी मिट्टी, ( मट्टी पाहाण जाइओ णेगा ) मिट्टी और पत्थरकी अनेक जातियां, ( सोवीरंजण ) सुरमा, ( लूणाई ) लवण–नमक, ( इच्चाई ) इत्यादि ( पुढवि भेआई ) पृथ्वीकाय जीवोंके भेद हैं ॥ ४ ॥

**भावार्थ**–स्फटिक, मणि, रत्न, मूंगा, हिंगलू, हरताल, मैनसिल, पारा, सोना, चान्दी, ताम्बा, लोहा, राँगा, सीसा–शीशा, जस्ता, खड़िया, लाल रङ्गकी मिट्टी, पाषाण-के टुकड़ोंसे मिली हुई सफेद मिट्टी, पलेवक नामक पत्थर, अबरक, तूरी नामक मिट्टी, ऊसरकी मिट्टी, और भी काली, पीली आदि रंगकी मिट्टी तथा पत्थर; सफेद, काला, लाल रंगका सुरमा; सांभर आदि नमक, इस प्रकार और भी बहुतसे पृथ्वीकाय जीवोंके भेद समझना चाहिये.

प्र०—क्या इन सोने-चान्दीके गहनोंमें भी जीव हैं?

उ०—नहीं, जब तक सोना-चान्दी खानमें रहता है तब तक उसमें जीव रहता है, खानसे निकालनेपर गलानेसे जीव नष्ट हो जाता है. इस तरह पत्थरोंको खानसे निकालने तथा मिट्टियोंको पैरों तले कुचलने आदिसे भी जीव नष्ट होते हैं।

---

" अब जलकायके जीवोंके भेद कहते हैं. "

**भोमंतरिक्ख-मुदगं,**
**ओसाहिम-करग-हरितणू-महिआ।**
**हुंति घणोदहिमाई,**
**भेआ णेगा य आउस्स ॥ ५ ॥**

(भोमं) भूमिका—कूँआ, तालाव आदिका जल, (अंतरिक्ख मुदगं) अन्तरिक्षका—आकाशका जल (ओसा) ओस, (हिम) वर्फ, (करग) ओले, (हरितणू) हरित वनस्पतिके—खेतमें वोये हुए गेहूँ, जव आदिके—वालोंपर जो पानीके वूंद होते हैं, वे, (महिया) महिमा—छोटे छोटे जलके कण जो वादलोंसे गिरते हैं, (घणोदहिमाई) घनोदधि आदि, (आउस्स) अप्काय जीवके, (भेआ णेगा) अनेक भेद, (हुंति) होते हैं ॥ ५ ॥

भावार्थ—कूँआ, तालाव आदिका पानी, वर्षाका पानी, ओसका पानी, वर्फका पानी, ओलोंका पानी, खेतकी

वनस्पतिके ऊपरके जलीय कण, आकाशमें वादलोंके घिरने-पर कभी कभी सूक्ष्म जल-तुषार गिरते हैं, वे, तथा घनोदधि ये सब, तथा और भी अप्काय जीवके भेद हैं.

प्र०—घनोदधि किसे कहते हैं ?

उ०—स्वर्ग और नरक-पृथ्वीके आधार-भूत जलीय-पिण्डको.

---

" अग्निकायजीवोंके भेद कहते हैं. "

इंगाल-जाल-मुम्मुर,—
उक्कासणि-कणग-विज्जुमाईआ ।
अगणिजिआणं भेआ,
नायव्वा निउणबुद्धीए ॥ ६ ॥

( इंगाल ) अंगार—ज्वालारहित काष्ठकी अग्नि, (जालं) ज्वाला (मुम्मुर) कण्डेकी अथवा भरसाँयकी गरम राखमें रहनेवाले अग्नि-कण, (उक्का) उल्का—आकाशसे जो अग्निकी वर्षा होती है वह, (असणि) अशनि—वज्रकी अग्नि, (कणग) आकाशमें उड़नेवाले अग्नि-कण, (विज्जुमाईआ) विजलीकी अग्नि इत्यादि, (अगणिजिआणं) अग्निकाय जीवोंके (भेआ) भेद (निउणबुद्धीए) निपुण-बुद्धिसे—सूक्ष्म-बुद्धिसे (नायव्वा) जानना ॥ ६ ॥

भावार्थ—काष्ठ आदिकी ज्वाला-रहित अग्नि, अग्निकी ज्वाला, कण्डेकी अथवा भरसाँयकी गरम राखमें रहनेवाले अग्नि-कण, उल्काकी अग्नि, आकाशीय अग्नि-कण, वज्रकी अग्नि, विद्युत्की अग्नि ये तथा अन्य भी अग्निकाय जीवोंके भेद सूक्ष्म-बुद्धिसे जानना चाहिये.

" अब वायुकाय जीवोंके भेद कहते हैं. "

उब्भामग-उक्कलिया,
मंडलि-मह-सुद्ध-गुंजवाया य ।
घणतणु-वायाईया,
भेया खलु वाउकायस्स ॥ ७ ॥

( उब्भामग ) उद्भ्रामक—तृण आदिको आकाशमें उड़ानेवाला वायु, ( उक्कलिया) उत्कलिका—नीचे वहनेवाला वायु, जिससे धूलिमें रेखायें हो जाती हैं. (मंडलि) गोलाकार वहनेवाला वायु, ( मह ) महावात—आन्धी, ( सुद्ध ) शुद्ध—मन्दवायु, ( गुंजवाया य ) और गुञ्जवायु—जिसमें गूँजनेकी आवाज होती है, ( घणतणुवायाईया ) घनवात, तनुवात आदि, (वाउकायस्स) वायुकायके ( भेया ) भेद हैं ॥ ७ ॥

भावार्थ—आकाशमें ऊँचा वहनेवाला, नीचे वहनेवाला, गोलाकार वहनेवाला, आन्धी, मन्द-वायु, गुञ्जारव करनेवाला

वायु, घनवात, तनुवात, ये सब, तथा और भी वायुकाय-जीवोंके भेद हैं.

प्र०—घनवात और तनुवातमें क्या फर्क है ?

उ०—घनवात जमे हुए घीकी तरह गाढ़ा है और तनुवात तपाये हुये घीकी तरह तरल है; घनवात स्वर्ग तथा नरक-पृथ्वीका आधार है और तनुवात नरक-पृथ्वीके नीचे है.

" वनस्पतिकाय जीवोंके भेद कहते हैं."

**साहारण-पत्तेआ,**
**वणसइजीवा दुहा सुए भणिआ ।**
**जेसिमणंताणं तणु,**
**एगा साहारणा तेऊ ॥ ८ ॥**

( सुए ) श्रुतमें—शास्त्रमें, ( वणसइ जीवा ) वनस्पति-कायके जीव, (साहारण पत्तेआ ) साधारण और प्रत्येक ऐसे, ( दुहा ) दो प्रकारके ( भणिया ) कहे गये हैं. ( जेसिमणंताणं ) जिन अनन्त जीवोंका ( एगा ) एक ( तणु ) शरीर हो, ( तेऊ ) वे ( साहारणा ) साधारण कहलाते हैं ॥ ८ ॥

भावार्थ—सिद्धान्तमें वमस्पतिकाय जीवोंके दो भेद कहे गये हैं;—साधारण-वनस्पति-काय और प्रत्येक वनस्पति-

काय. जिन अनन्त जीवोंका शरीर एक हो वे जीव, 'साधारण-वनस्पतिकाय' कहलाते हैं.

" दो गाथाओंसे साधारण-वनस्पतिकायके भेद कहते हैं. "

कंदा-अंकुर-किसलय,-

पणगा-सेवाल-भूमिफोडा अ ।

अल्लय-तिय-गजर-मो,-

त्थ वत्थुला-थेग-पल्लंका ॥ ९ ॥

कोमलफलं च सव्वं,

गूढसिराइं सिणाइपत्ताइं ।

थोहरि-कुंआरि-गुग्गुलि,

गलोय-पमुहाइ-छिन्नरुहा ॥ १० ॥

(कंदा) कन्द—आलू, सूरन, मूलीका कन्द आदि (अंकुर) अङ्कुर, ( किसलय ) नये कोमल पत्ते, (पणगा सेवाल) पाँच रंगकी फुल्लि-जो कि वासी अन्नमें पैदा होती है, और सिवार ( भूमिफोडा ) भूमिस्फोट,—वर्षा ऋतुमें छत्रके आकारकी वनस्पति होती है, ( अल्लयतिय ) अद्रक, हल्दी और कचूर, (गज्जर) गाजर, (मोत्थ) नागरमोथा, (वत्थुला) बथुआ, ( थेग ) एक किस्मका कन्द, ( पल्लंका )

पालखी—शाकविशेष ॥ ९ ॥ ( कोमलफलं च सव्वं ) सब तरहके कोमल फल—जिनमें बीज पैदा न हुये हों, ( गूढ सिराइं सिणाइ पत्ताइं ) जिनकी नसें प्रकट न हुई हों, वे, तथा सन आदिके पत्ते, (थोहरि) थूहर, ( कुंआरि ) घीकुवार, ( गुग्गुलि ) गुग्गुल, ( गलोय ) गिलोय—गुर्च, ( पमुहाइ ) आदि, ( छिन्नरुहा ) छिन्नरुह—काटनेपर भी ऊगनेवाली कुछ वनस्पतियाँ ॥ १० ॥

**भावार्थ**—आलू, सूरन, मूलीका कन्द, अङ्कुर, नये कोमल पत्ते, और फुल्लि जो कि बासी अन्नमें पाँच रंग की पैदा होती है और सिवार, वर्षा ऋतुमें पैदा होनेवाली छत्राकार वनस्पति, अद्रक, हल्दी, कर्चूक, गाजर, नागरमोथा, बथुआ, थेग नामक कन्द, पालकी, जिनमें बीज पैदा न हुये हों, ऐसे कोमल फल, जिनमें नसें प्रकट न हुई हों, वे, और सन आदिके पत्ते, थूहर, घीकुवार, गुग्गुल तथा काटनेपर बो देनेसे ऊगनेवाली गुर्च आदि वनस्पतियाँ, ये सब साधारण-वनस्पतिकाय कहलाते हैं, इनको अनन्तकाय और वादर निगोदके जीव भी कहते हैं. यहाँ यह समझना चाहिये कि ये सब गीली वनस्पतियाँ ही सजीव होती हैं, सूखी नहीं.

**इच्चाइणो अणेगे, हवंति भेया अणंतकायाणं।**
**तेसिं परिजाणणत्थं,लक्खणमेयं सुए भणियं॥११॥**

( इच्चाइणो ) इत्यादि, ( अणेगे ) अनेक ( भेया ) भेद, ( अणंतकायाणं ) अनन्तकाय जीवोंके, ( हवंति ) हैं, ( तेसिं ) उनके, ( परिजाणणत्थं ) अच्छी तरह जाननेके लिये, ( सुए ) श्रुतमें—शास्त्रमें, ( एयं ) यह ( लक्खणं ) लक्षण, ( भणियं ) कहा है ॥ ११ ॥

**भावार्थ**—नव और दसकी गाथाओंमें जो अनन्त-कायके भेद गिनाये हैं, उनसे भी अधिक भेद हैं, उन सब-को समझानेके लिये सिद्धान्तमें अनन्तकायका लक्षण कहा है.

"अनन्तकायका लक्षण."

**गूढसिरसंधिपव्वं, समभंग-महीरगं च छिन्नरुहं।**
**साहारणं सरीरं, तव्विवरीअं च पत्तेयं ॥ १२ ॥**

जिनकी ( सिर ) नसें, ( संधि ) सन्धियाँ, और ( पव्वं ) पर्व—गाँठें, ( गूढ ) गुप्त हों—देखनेमें न आवें, ( समभंगं ) जिनको तोड़नेसे समान टुकड़े हों, ( अहीरगं ) जिनमें तन्तु न हों, ( छिन्नरुहं ) जो काटनेपर भी ऊगें ऐसी वनस्पतियाँ—फल, फूल, पत्ते, मूलियाँ आदि, ( साहारणं ) साधारण, ( सरीरं ) शरीर है. ( तव्विवरीअं च ) और उससे विपरीत, ( पत्तेयं ) प्रत्येक-वनस्पतिकाय है ॥ १२ ॥

**भावार्थ**—अनन्तकाय वनस्पति उसको समझना

चाहिये " जिस वनस्पातिमें नसें, सन्धियाँ और गाँठें न हों; जिसको तोड़नेसे समान भाग हो; जिसमें तन्तु न हो; जिसको काटकर बो देनेसे वह ऊगे;" जिसमें उक्त लक्षण न हो, उस वनस्पातिको 'प्रत्येक-वनस्पति' समझना चाहिये।

"अब प्रत्येक-वनस्पतिकायके लक्षण तथा भेद कहते हैं."

**एगसरीरे एगो,**
**जीवो जेसिं तु ते य पत्तेया।**
**फल-फूल-छल्लि-कट्ठा,**
**मूलगपत्ताणि बीयाणि ॥ १३ ॥**

( जेसिं ) जिनके ( एगसरीरे ) एक शरीरमें ( एगो जीवो ) एक जीव हो ( ते तु ) वे तो ( पत्तेया ) प्रत्येक-वनस्पतिकाय हैं; उनके सात भेद हैं ( फल, फूल, छल्लि, कट्ठा ) फल, पुष्प, छाल, काष्ठ, (मूलग) मूलियाँ, (पत्ताणि) पत्ते, और (बीयाणि) बीज ॥ १३ ॥

भावार्थ—जिन वनस्पातियोंके एक शरीरमें एक जीव हो अर्थात् एक शरीरका एक ही जीव, स्वामी हो, उन वनस्पतियोंको प्रत्येक-वनस्पातिकाय समझना चाहिये; प्रत्येक-वनस्पतिकाय जीवके सात भेद हैं;—फल, पुष्प, छाल, काष्ठ, मूलियाँ, पत्ते और बीज.

" पृथ्वीकाय आदि जीवोंके विषयमें कुछ विशेष कहते हैं. "

**पत्तेयं तरु मोत्तुं, पंचवि पुढवाइणो सयललोए।**
**सुहुमा हवंति नियमा, अंतमुहुत्ताउ अद्दिस्सा।१४।**

( पत्तेयं तरु ) प्रत्येक-वनस्पतिकायको ( मोत्तुं ) छोड़कर, (पंचवि) पाँचों ही (पुढवाइणो) पृथ्वीकाय आदि, (सुहुमा) सूक्ष्म-स्थावर (सयल लोए) सम्पूर्ण लोकमें (हवंति) विद्यमान हैं—रहते हैं—और वे (नियमा) नियमसे ( अंतमुहुत्ताउ ) अन्तर्मुहूर्त आयुष्यवाले होते हैं, तथा (अद्दिस्सा) अदृश्य हैं—आँखसे देखनेमें नहीं आते ॥ १४ ॥

भावार्थ—प्रत्येक-वनस्पतिकायको छोड़कर पृथ्वीकाय आदि पाँचों ही सूक्ष्म-स्थावर सम्पूर्ण लोकमें भरे पड़े हैं. उनकी आयु अन्तर्मुहूर्तकी होती है तथा वे इतने छोटे हैं कि आँख उन्हें नहीं देख सकती.

प्र०—अन्तर्मुहूर्त किसे कहते हैं ?

उ०—नव समयसे लेकर, एक समय कम, दो घड़ी जितना काल अन्तर्मुहूर्त कहलाता है. नव समयोंका अन्तर्मुहूर्त सबसे छोटा अर्थात् जघन्य है; और, दो घड़ीमें एक समय कम हो, तो वह अन्तर्मुहूत उत्कृष्ट है; बीचके कालमें, नव समयसे आगे, एक एक समय बढ़ाते जाँय तो, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक, असंख्य अन्तर्मुहूर्त होते हैं.

प्र०—समय किसे कहते हैं ?

उ०—उस सूक्ष्म कालको, जिसका कि सर्वज्ञकी दृष्टिमें भी विभाग न हो सके.

प्र०—मुहूर्त किसे कहते हैं ?

उ०—दो घड़ी अर्थात् अड़तालीस मिनिटोंका मुहूर्त होता है.

विशेष—प्रत्येकवनस्पतिकाय नियमसे बादर है, पाँच स्थावर, सूक्ष्म और बादर दो तरहके हैं, सबको मिलाकर ग्यारह भेद हुये; ये ग्यारह पर्याप्त और अपर्याप्त-रूपसे दो तरहके हैं, इस तरह स्थावरजीवके बाईस भेद हुये.

प्र०—पर्याप्त-जीव किसे कहते हैं ?

उ०—जो जीव अपनी पर्याप्तियाँ पूरी कर चुका हो, उसे.

प्र०—अपर्याप्त-जीव किसे कहते हैं ?

उ०—जो जीव अपनी पर्याप्तियाँ पूरी न कर चुका हो, उसे

प्र०—पर्याप्ति किसे कहते हैं ?

उ०—जीवकी उस शक्तिको—जिसके द्वारा जीव, आहारको ग्रहण कर रस, शरीर और इन्द्रियोंको बनाता है तथा योग्य पुद्गलोंको ग्रहण कर श्वासोच्छ्वास, भाषा और मनको बनाता है.

संख-कवड्डय-गंडुल,
जलोय-चंदणग-अलस-लहगाई ।

मेहरि-किमि-पूयरगा,
बेइंदिय माइवाहाइ ॥ १५ ॥

( संख ) शङ्ख—दक्षिणावर्त आदि, ( कवड्डय ) कपर्दक—कौड़ी, ( गंडुल ) गण्डोल पेटमें जो मोटे कृमि मलरूप पैदा होते हैं, ( जलोय ) जलौका—जोंक, (चंदणग) चन्दनक—अक्ष—जिसके निर्जीव शरीरको साधु लोग स्थापनाचार्यमें रखते हैं, ( अलस ) भूनाग जो वर्षा ऋतुमें साँप सरीखे लंबे लाल रंगके जीव पैदा होते हैं, ( लहगाई ) लहक—लालीयक—जो वासी रोटी आदि अन्नमें पैदा होते हैं, (मेहरि) काष्ठके कीड़े, ( किमि ) कृमि—पेटमें, फोड़ेमें तथा बवासीर आदिमें पैदा होते हैं, ( पूअरगा ) पूतरक—पानीके कीड़े, जिनका मुँह काला और रंग लाल वा श्वेत-प्राय होता है, ( माइवाहाई ) मातृवाहिका—जिसकी गुजरातमें अधिकता है और वहाँके लोग चूडेल कहते हैं, इत्यादि ( बेइंदिय ) द्वीन्द्रिय जीव हैं. ॥ १५ ॥

भावार्थ—जिन जीवोंके त्वचा और जीभ हो, दूसरी इन्द्रियाँ न हों, वे जीव द्वीन्द्रिय कहलाते हैं, जैसे शंख, कौड़ी, पेटके जीव, जोंक, अक्ष, भूनाग, लालीयक, काष्ठकीट, कृमि, पूतरक और मातृवाहिका आदि.

"अब दो गाथाओंसे त्रीन्द्रिय जीवके भेद कहते हैं."

**गोमी-मंकण-जूआ, पिपीलि-उद्देहिया य मक्कोडा।**
**इल्लिय-घयमिल्लीओ, सावय-गोकीड जाईओ ॥१६॥**
**गद्दहय-चोरकीडा, गोमयकीडा य धन्नकीडा य।**
**कुंथु-गुवालिय-इलिया, तेइंदिय इंदगोवाई ॥ १७॥**

( गोमी ) गुल्मि—कानखजूरा, ( मंकण ) मत्कुण—खटमल, ( जूआ ) यूका—जूँ, ( पिपीलि ) पिपीलिका—चींटी, ( उद्देहिया ) उपदेहिका—दीमक, ( मक्कोडा ) मत्कोटक—मकोड़ा, ( इल्लिय ) इल्लिका—अल्ली, जो अनाजमें पैदा होती है, ( घयमिल्लीओ ) घृतेलिका—जो घीमें पैदा होती है, ( सावय ) चर्म—यूका—जो शरीरमें पैदा होती है, जिससे भविष्यमें अनिष्टकी शङ्का की जाती है, ( गोकीड जाईओ ) गोकीटकी जातियाँ अर्थात् पशुओंके कान आदि अवयवोंमें पैदा होनेवाले जीव ॥ १६ ॥ ( गद्दहय ) गर्दभक—गोशाला आदिमें पैदा होनेवाले सफेद रँगके जीव, (चोरकीडा) चोरकीट—विष्ठाके कीड़े, (गोमयकीडा) गोमयकीट—गोबरके कीड़े, ( धन्नकीडा ) धान्यकीट—अनाजके कीडे, (कुंथु) कुन्थु—एक किस्मका कीड़ा, ( गुवालिय ) गोपालिका—एक किस्मका अप्रसिद्ध जीव, ( इलिया ) ईलिका—जो शक्कर और चावलमें पैदा होती है, (इंदगोवाई) इन्द्रगोप—जो वर्षामें लाल

रँगका जीव पैदा होता है जिसे पंजाबी चीअन्होटी, और गुजराती गोकलगाय कहते हैं-इत्यादि ( तेइंदिय ) त्रीन्द्रिय जीव हैं ॥ १७ ॥

भावार्थ-जिन जीवोंको सिर्फ शरीर, जीभ और नाक हो, उनको त्रीन्द्रिय कहते हैं,-वे ये हैं;-कानखजूरा, खटमल, जूँ, चींटी, दीमक, अनाजमें पैदा होनेवाली अल्ली, मकोड़ा, घीमें पैदा होनेवाला जीव, शरीरमें पैदा होनेवाली चर्मजूँ, गायके कान आदिमें पैदा होनेवाले कीड़े, गोशालामें पैदा होनेवाले जीव, विष्ठाके कीड़े, गोबरके कीड़े, अनाजके कीड़े, कुन्थु, गोपालिका, शक्कर और चावलमें पैदा होने-वाले जीव, इन्द्रगोप आदि.

"चतुरिन्द्रिय जीवोंके भेद कहते हैं."

**चउरिंदिया य विच्छू,**

**ढिंकुण-भमरा य भमरिया-तिड्डा ।**

**मच्छिय-डंसा-मसगा,**

**कंसारी-कविलडोलाई ॥ १८ ॥**

( विच्छू ) बिच्छू, ( ढिंकुण ) ढिङ्कुण-घुड़साल आदिमें पैदा होता है, ( भमरा ) भ्रमर-भौंरा, ( भमरिया ) भ्रम-रिका-बर्रें, ( तिड्डा ) टिड्डी-टीड़ी, ( मच्छिय ) मक्षिका-

मक्खी, मधुमक्खी, ( डंसा ) दंश—डांस, (मसगा) मशक—मच्छर, (कंसारी) कंसारिका—जो उजाड़ जगहमें पैदा होती है, ( कविलडोलाई ) कपिलडोलक—एक किस्मका जीव जिसे गुजराती खड़माँकड़ी कहते हैं, इत्यादि ( चउरिंदिया) चतुरिन्द्रिय जीव हैं ॥ १८ ॥

भावार्थ—जिन जीवोंको शरीर, जीभ, नाक और आँख हो, वे चतुरिन्द्रिय कहलाते हैं, जैसे:—बिच्छू, घुड़सालमें पैदा होनेवाला ढिङ्कुण नामक जीव, भौंरा, वर्रे, मक्खी, मधुमक्खी, डाँस, मच्छर, टीढ़ी, कंसारिका, कपिलडोलक आदि ।

---

"अथ पञ्चेन्द्रिय जीवोंके भेद कहते हैं."

**पंचिंदिया य चउहा, नारय-तिरिया-मणुस्स-देवा य**
**नेरइया सत्तविहा, नायव्वा पुढविभेएणं ॥ १९ ॥**

(पंचिंदिया) पञ्चेन्द्रिय जीव ( चउहा ) चतुर्धा—चार प्रकारके हैं ( नारय ) नारक, ( तिरिया ) तिर्यञ्च, (मणुस्स) मनुष्य ( य ) और ( देवा ) देव, ( नेरइया ) नैरयिक-नरकमें रहनेवाले जीव ( पुढविभेएणं ) पृथ्वीके भेदसे (सत्तविहा) सप्तविधा—सात प्रकारके (नायव्वा) जानना ॥ १९ ॥

भावार्थ—पञ्चेन्द्रिय जीवके चार भेद हैं;—नारक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव. भिन्न भिन्न सात स्थानोंमें पैदा

होनेके कारण नारक जीव सात प्रकारके हैं. उन सात स्थानोंके– नरकोंके नाम ये हैं;—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और तमस्तमःप्रभा.

“ पञ्चेन्द्रिय जीवोंमें नारकोंके भेद कहकर अब चार गाथाओंसे पञ्चेन्द्रिय, तिर्यञ्च और मनुष्योंके भेद कहते हैं.”

“ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चके भेद.”

जलयर-थलयर-खयरा,
तिविहा पंचेंदिया तिरिक्खा य ।
सुसुमार-मच्छ-कच्छव,
गाहा-मगराइ जलचारी ॥ २० ॥

(जलयर) जलचर, (थलयर) स्थलचर, (खयरा) खेचर (पंचेंदिया) पञ्चेन्द्रिय (तिरिक्खा) तिर्यञ्च (तिविहा) त्रिविध अर्थात् तीन प्रकारके हैं. (जलचारी) जलमें रहनेवाले (सुसुमार) शिशुमार–सुईस, जिसका आकार भैंस जैसा होता है, (मच्छ) मत्स्य–मछली, (कच्छव) कच्छप–कछुआ, (गाहा) ग्राह–घड़ियाल, (मगराइ) मकर–मगर आदि हैं ॥ २० ॥

भावार्थ–पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चके तीन भेद हैं;–जल-

चर, स्थलचर और खेचर. जलचर जीव ये हैं;—सुईस, मछली, कछुआ, ग्राह, मकर आदि.

"अब स्थलचर जीवोंके भेद कहते हैं."

चउपय-उरपरिसप्पा,
भुयपरिसप्पा य थलयरा तिविहा ।
गो-सप्प-नउल-पमुहा,
बोधव्वा ते समासेणं ॥ २१ ॥

( थलयरा ) स्थलचर जीव ( तिविहा ) त्रिविध अर्थात् तीन प्रकारके हैं; ( चउपय ) चतुष्पद—चार पैरसे चलनेवाले, (उरपरिसप्पा) उरःपरिसर्प—छातीसे—पेटसे चलनेवाले ( य ) और ( भुयपरिसप्पा ) भुजपरिसर्प—भुजाओंसे चलनेवाले, ( गो ) गाय, ( सप्प ) साँप, (नउल) नकुल-न्योला ( पमुहा ) प्रमुख—आदि ( ते ) वे (समासेणं) समाससे—सक्षेपसे ( बोधव्वा ) जानने ॥ २१ ॥

भावार्थ—जमीनपर चलनेवाले जीव—जिनको स्थलचर कहते हैं—तीन प्रकारके हैं; (१) चार पैरसे चलनेवाले गाय, भैंस आदि; (२) पेटसे चलनेवाले सर्पादि; (३) भुजाओंसे चलने वाले नकुल—न्योला आदि । क्रमशः इन तीनोंको चतुष्पद, उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प कहते हैं.

"अब खेचर जीवोंके भेद कहते हैं."

खयरा-रोमय-पक्खी,
  चम्मयपक्खी य पायडा चेव ।
नरलोगाओ बाहिं,
  समुग्गपक्खी वियंयपक्खी ॥ २२ ॥

( खयरा ) खेचर—आकाशमें उड़नेवाले जीव ( रोमय-पक्खी ) रोमजपक्षी (य) और ( चम्मयपक्खी ) चर्मजपक्षी ( पायडा ) प्रकट हैं—प्रसिद्ध हैं. ( नरलोगाओ ) नरलोकसे—मनुष्यलोकसे ( बाहिं ) बाहर ( समुग्गपक्खी ) समुद्गपक्षी और ( वियंयपक्खी ) विततपक्षी हैं ॥ २२ ॥

भावार्थ—आकाशमें उड़नेवाले तिर्यञ्च, खेचर कहलाते हैं, उनके दो भेद हैं;—रोमजपक्षी, और चर्मजपक्षी. रोमसे जिनके पङ्ख बने हैं वे रोमजपक्षी, जैसे—तोता, हंस, सारस आदि. चामसे जिनके पङ्ख बने हैं वे चर्मजपक्षी, जैसे—चमगादड़ आदि. जहाँ मनुष्यका निवास नहीं है, उस भूमिमें दो तरहके पक्षी होते हैं;—समुद्गपक्षी और विततपक्षी. सिकुड़े हुए, जिनके डब्बेके समान पङ्ख हों, वे समुद्गपक्षी. जिनके पङ्ख फैले हुए हों, वे विततपक्षी कहलाते हैं.

———

"तीन प्रकारके तिर्यञ्च कह चुके, उनके प्रत्येकके दो दो भेद कहते हैं."

**सव्वे जल-थल-खयरा,**
**संमुच्छिमा गब्भया दुहा हुंति ।**
**कम्माकम्मगभूमि,**
**अंतरदीवा मणुस्सा य ॥ २३ ॥**

( सव्वे ) सब (जलथलखयरा) जलचर, स्थलचर, और खेचर ( संमुच्छिमा ) सम्मूर्च्छिम, ( गब्भया ) गर्भज (दुहा) द्विधा–दो प्रकारके (हुंति) होते हैं. ( मणुस्सा ) मनुष्य ( कम्माकम्मग भूमि ) कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज (य) और ( अंतरदीवा ) अन्तर्द्वीपवासी हैं ॥ २३ ॥

भावार्थ–पहले तिर्यञ्चके तीन भेद कहे हैं;–जलचर, स्थलचर, और खेचर. ये तीनों दो दो प्रकारके हैं;–संमूर्च्छिम, और गर्भज. जो जीव, मा-बापके विना ही पैदा होते हैं, वे संमूर्च्छिम कहलाते हैं. जो जीव, गर्भसे पैदा होते हैं वे गर्भज. मनुष्यके तीन भेद हैं, कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज, और अन्तर्द्वीपनिवासी. खेती, व्यापार आदि कर्म-प्रधान भूमिको कर्मभूमि कहते हैं । उसमें पैदा होनेवाले मनुष्य, कर्म-भूमिज कहलाते हैं; कर्मभूमियाँ पन्द्रह हैं; पाँच भरत पाँच ऐरावत और पाँच महाविदेह. जहाँ खेती, व्यापार

आदि कर्म नहीं होता उस भूमिको अकर्मभूमि कहते हैं, वहाँ पैदा होनेवाले मनुष्य अकर्मभूमिज कहलाते हैं; अकर्मभूमियों-की संख्या तीस है। वह इस प्रकार:—ढाई द्वीपमें पाँच मेरु हैं, प्रत्येक मेरुके दोनों तरफ अर्थात् उत्तर तथा दक्षिणकी ओर १ हैमवंत, २ ऐरण्यवंत, ३ हरिवर्ष, ४ रम्यक, ५ देवकुरु और ६ उत्तरकुरु, इन नामोंकी छह छह भूमियाँ हैं, इन छह भूमियोंको पाँच मेरुओंसे गुणनेपर तीस संख्या होती है. अन्तर्द्वीपमें पैदा होनेवाले मनुष्य अन्तर्द्वीपनिवासी कहलाते हैं, अन्तर्द्वीपोंकी संख्या छप्पन है,वह इस प्रकार—भरतक्षेत्रसे उत्तर दिशामें हिमवान् नामक पर्वत है, वह पूर्व दिशामें तथा पश्चिम दिशामें लवणसमुद्र तक लम्बा है, इसकी पूर्व तथा पश्चिममें दो दो दँष्ट्राकार भूमियाँ समुद्रके भीतर हैं, इस तरह पूर्व तथा पश्चिमकी चार दँष्ट्रायें हुईं; इसी प्रकार ऐरावतक्षेत्रसे उत्तर, शिखरी नामक पर्वत है, वह भी पूर्व तथा पश्चिममें समुद्र तक लम्बा है और दोनों दिशाओंमें दो दो दँष्ट्राकार भूमियाँ समुद्रके अन्दर घुसी हैं, दोनोंकी आठ दँष्ट्रायें हुईं, हर एक दँष्ट्रामें सात सात अन्तर्द्वीप हैं, सातको आठसे गुणनेपर छप्पन संख्या हुई.

विशेष—कर्मभूमि, अकर्मभूमि और अन्तर्द्वीप, ये सब ढाई द्वीपमें हैं. जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड और पुष्करवरद्वीपका आधा भाग, इनको ढाई द्वीप कहते हैं. इस ढाई द्वीपमें ही

मनुष्य पैदा होते हैं तथा मरते हैं, इसलिये इसको 'मनुष्य-क्षेत्र' कहते हैं, इसका परिमाण पैंतालीस लाख योजन है. अकर्मभूमि और अन्तर्द्वीपमें जो मनुष्य रहते हैं, उन्हें 'युगलिया' कहते हैं, इसका कारण यह है कि स्त्री-पुरुपका युग्म—जोड़ा—साथ ही पैदा होता है और उनका वैवाहिक सम्बन्ध भी परस्पर ही होता है. इनकी ऊँचाई आठसौ धनुपकी, और आयु, पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग जितनी है. पन्द्रह कर्मभूमियाँ, तीस अकर्मभूमियाँ और छप्पन अन्तर्द्वीप, इन सबको मिलानेसे एकसौ एक मनुष्यभूमियाँ हुईं, इनमें पैदा होनेसे मनुष्योंके भी उतने ही भेद हुए, इनके भी पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो भेद हैं, इसलिये दोसौ दो भेद हुए. इन गर्भज मनुष्योंके मल, मूत्र, कफ आदिमें जो मनुष्य पैदा होते हैं, वे संमूर्च्छिम कहलाते हैं तथा वे अपनी पर्याप्ति पूरी किये विना ही मर जाते हैं; इनके—संमूर्च्छिम मनुष्यके—एकसौ एक भेदोंके साथ दोसौ दोको मिलानेसे मनुष्योंके तीनसौ तीन भेद होते हैं.

---

" अथ चार प्रकारके देवताओंके भेद कहते हैं. "

**दसहा भवणाहिवई, अट्ठविहा वाणमंतरा हुंति।**
**जोइसिया पंचविहा, दुविहा वेमाणिया देवा॥२४॥**

( भवणाहिवई ) भवनाधिपति देवता, (दसहा) दशप्रा-

दस प्रकारके हैं, (वाणमंतरा) वानमन्तर देवता, (अट्ठविहा) अष्टविधा–आठ प्रकारके, ( हुंति ) होते हैं, ( जोइसिया ) ज्योतिष्का–ज्योतिष्क देवता, ( पंचविहा ) पञ्चविधा–पाँच प्रकारके हैं और ( वेमाणिया देवा ) वैमानिक देवता, ( दुविहा ) दो प्रकारके हैं ॥ २४ ॥

भावार्थ–भवनपति देवताओंके दस भेद हैं;–१ असुरकुमार, २ नागकुमार, ३ सुपर्णकुमार, ४ विद्युत्कुमार, ५ अग्निकुमार, ६ द्वीपकुमार, ७ उदधिकुमार, ८ दिक्कुमार, ९ वायुकुमार, और १० स्तनितकुमार. वानमन्तर–वाणव्यन्तर–देवताओंके आठ भेद हैं;–१ पिशाच, २ भूत, ३ यक्ष, ४ राक्षस, ५ किन्नर, ६ किंपुरुष, ७ महोरग, और ८ गान्धर्व. वाणव्यन्तर ( वानमन्तर) के ये भी आठ भेद हैं;–१ अणपन्नी, २ पणपन्नी, ३ इसीवादी, ४ भूतवादी, ५ कन्दित, ६ महाकन्दित, ७ कोहण्ड, और ८ पतङ्ग. ज्योतिष्क देवताओंके पाँच भेद हैं;—१ चन्द्र, २ सूर्य, ३ ग्रह, ४ नक्षत्र, और ५ तारा. वैमानिक देवता दो प्रकारके हैं;—१ कल्पोपपन्न, और २ कल्पातीत. कल्प अर्थात् आचार–तीर्थङ्करोंके पाँच कल्याणकमें आना-जाना, उसकी रक्षा करनेवाले देवता, 'कल्पोपपन्न' कहलाते हैं. उक्त आचारके पालन करनेका अधिकार जिन्हें नहीं है, वे देव, 'कल्पातीत' कहलाते हैं. कल्पोपपन्न देवताओंके बारह लोक हैं.

इसलिये स्थानके भेदसे उन देवोंके भी बारह भेद समझना चाहिये. बारह लोक ये हैं;–१ सौधर्म, २ ईशान, ३ सनत्कुमार, ४ माहेन्द्र, ५ ब्रह्म, ६ लान्तक, ७ शुक्र, ८ सहस्रार, ९ आनत, १० प्राणत, ११ आरण, और १२ अच्युत. कल्पातीत देवोंके चौदह भेद हैं;–नवग्रैवेयकमें रहनेवाले तथा पाँच अनुत्तरविमानमें रहनेवाले. नवग्रैवेयकोंके नाम ये हैं;–१ सुदर्शन, २ सुप्रबुद्ध, ३ मनोरम, ४ सर्वतोभद्र, ५ विशाल, ६ सुमनस, ७ सौमनस, ८ प्रियङ्कर, और ९ नन्दिकर. पाँच अनुत्तरविमानोंके नाम ये हैं;–१ विजय, २ वैजयन्त, ३ जयन्त, ४ अपराजित, और ५ सर्वार्थसिद्ध. अब उक्त देवोंके स्थान–रहनेकी जगह–संक्षेपमें कहते हैं;–मेरु पर्वतके मूलमें समतल पृथ्वी है, उससे नीचे रत्नप्रभा नामक प्रथम नरकका दल एक लाख अस्सी हजार योजन मोटा है, उसमें तेरह प्रतर हैं, उन प्रतरोंमें बारह आन्तर-स्थान हैं, प्रथम और अन्तिम आन्तर-स्थानोंको छोड़कर बाकीके दस आन्तर-स्थानोंमें, हर एकमें, एक एक भवनपति देवोंके निकाय रहते हैं प्रत्येक निकायमें दक्षिणकी तरफ एक, और उत्तरकी तरफ एक, ऐसे दो इन्द्र होते हैं, इस तरह दस निकायोंके बीस इन्द्र हुए.

पहले कहा गया है कि रत्नप्रभाका दल एक लाख अस्सी हजार योजन मोटा है, ऊपर एक हजार और नीचे

एक हजार योजन पृथ्वीको छोड़कर बाकीके एक लाख अठहत्तर हजार योजनमें पूर्वोक्त तेरह प्रतर हैं, जिनमें कि दस प्रकारके भवनपति देव रहते हैं, ऊपरके बचे हुए एक हजार योजनमें सौ योजन ऊपर, और सौ योजन नीचे छोड़ दिये जानेपर बाकी आठसौ योजन बचे, उनमें आठ व्यन्तर निकाय हैं; प्रत्येक निकायमें, भवनपति निकायकी तरह, दक्षिणमें एक, और उत्तरमें एक, ऐसे दो इन्द्र रहते हैं, इस तरह आठ व्यन्तर निकायके सोलह इन्द्र हुए. ऊपर जो सौ योजन छोड़ दिये गये थे, उनमेंसे दस योजन ऊपर, और दस योजन नीचे छोड़ दिये जानेपर अस्सी योजन बचे, उनमें आठ प्रकारके वाणमन्तर देव रहते हैं; प्रत्येक निकायमें पहलेकी तरह एक दक्षिणमें, और एक उत्तरमें ऐसे दो इन्द्र रहते हैं, इस प्रकार आठ निकायोंके सोलह इन्द्र हुए; दोनों प्रकारके व्यन्तरोंके बत्तीस इन्द्र हुए, इनमें भवनपतिके बीस इन्द्रोंके मिलानेपर बावन इन्द्र हुए. अब ज्योतिष्क देवोंकी रहनेकी जगह कहते हैं. पहले ज्योतिष्क देवोंके पाँच भेद कह चुके हैं, उनके और भी दो भेद हैं, एक 'चर' और दूसरे 'स्थिर'; मनुष्य-क्षेत्रमें जो ज्योतिष्क देव हैं, वे चर हैं, अर्थात् हमेशा घूमते रहते हैं और मनुष्यलोकसे बाहरके ज्योतिष्क देव, स्थिर हैं अर्थात् उनके विमान एक ही जगह रहते हैं, जहाँपर कि वे

हैं. चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारा, इन पांच ज्योतिष्क देवोंमें, चन्द्र और सूर्य, इन दोनोंकी इन्द्र-पदवी है अर्थात् ये दोनों, ज्योतिष्कोंमें इन्द्र कहलाते हैं, दूसरोंको इन्द्र-पदवी नहीं है. मेरुके समतल–मूलसे ऊपर सात सौ नव्वे योजनकी ऊँचाईपर ताराओंके विमान हैं, वहाँसे दस योजनकी ऊँचाई-पर सूर्यका विमान है, वहाँसे अस्सी योजनकी ऊँचाईपर चन्द्रका विमान है, वहाँसे चार योजनकी ऊँचाईपर नक्षत्रोंके विमान हैं, वहाँसे सोलह योजनपर दूसरे दूसरे ग्रहोंके विमान हैं, तात्पर्य यह है कि मेरुके मूलकी सपाट-भूमिसे सातसौ नव्वे योजनके ऊपर एकसौ दस योजनोंमें ज्योतिष्क देव रहते हैं. अब वैमानिक देवोंके स्थान कहते हैं;–सम्पूर्ण लोक–जिसे त्रिभुवन कहते हैं—उसका आकार पुरुषके समान है और उसकी लम्बाई चौदह राजू है, नीचेकी सात राजुओंमें सात नरक हैं. नाभिकी जगह–मध्यमें–मनुष्यलोक है. मेरुकी सपाटभूमिसे सातसौ नव्वे योजनपर ज्योतिष्क देवोंके विमान हैं, वहाँसे लगभग एक राजू ऊपर, दक्षिण दिशामें सौधर्म देवलोक और उत्तर दिशामें ईशान देवलोक परस्पर जुड़े हुए हैं; वहाँसे कुछ दूर ऊपर, दक्षिणमें तृतीय देवलोक सनत्कु-मार और उत्तरमें चौथा देवलोक माहेन्द्र, एक दूसरेसे लगे हुए हैं; वहाँसे ऊपर पाँचवाँ ब्रह्मलोक, छठा लान्तक, सातवाँ शुक्र, आठवाँ सहस्रार ये चार देवलोक, कुछ कुछ अन्तरपर,

क्रमसे एकपर एक, ऐसी स्थितिमें हैं; वहाँसे कुछ ऊँचाईपर नववाँ आनत और दसवाँ प्राणत, दक्षिण और उत्तरमें, एक दूसरेसे लगे हुए हैं; वहाँसे कुछ ऊँचाईपर, ग्यारहवाँ आरण और बारहवाँ अच्युत, दक्षिण तथा उत्तर दिशाओंमें, एक दूसरेसे जुड़े हुए हैं. प्रथमके आठ देवलोकोंके आठ इन्द्र हैं अर्थात् हर एक देवलोकका एक एक इन्द्र है; पर नववें और दसवें देवलोकका एक तथा ग्यारहवें और बारहवें देवलोकका एक, इस प्रकार अन्तिम चार देवलोकोंके दो इन्द्र हैं; प्रथमके आठ मिलानेसे कल्पोपपन्न वैमानिक देवताओंके दस इन्द्र हुए. पुरुषाकार लोकके गलेके स्थानमें नवग्रैवेयक हैं, वहाँसे कुछ ऊपर पाँच अनुत्तरविमान हैं. लोकरूप पुरुषके ललाटकी जगह सिद्धशिला है, जो स्फटिकके समान निर्मल है, वहाँसे एक योजनपर लोकका अन्त होता है, लोकके अन्तिमभागमें सिद्ध जीवोंका निवास है. अब तीन प्रकारके किल्बिषिक देव तथा नव प्रकारके लोकान्तिक देवोंका निवासस्थान कहते हैं. प्रथम प्रकारके किल्बिषिकोंकी तीन पल्योपम आयु है और वे पहले तथा दूसरे देवलोकके नीचे रहते हैं. दूसरे प्रकारके किल्बिषिकोंकी आयु, तीन सागरोपमकी है और वे तीसरे तथा चौथे देवलोकके नीचे रहते हैं. तीसरे प्रकारके किल्बिषिकोंकी आयु तेरह सागरोपम है और वे पाँचवें तथा छठे देवलोकके नीचे रहते हैं. ये सब किल्बि-

षिक देव, चाण्डालके समान, देवोंमें नीच समझे जाते हैं. लोकान्तिक देव, पाँचवें देवलोकके अन्तमें उत्तर-पूर्वके कोण-में रहते हैं. चौसठ इन्द्रः—भवनपति देवोंके बीस, व्यन्तरोंके बत्तीस, ज्योतिषियोंके दो और वैमानिक देवोंके दस, सबकी संख्या मिलानेपर इन्द्रोंकी चौसठ संख्या होती है.

"जीवोंके पाँचसौ तिरसठ (५६३) भेद."

शास्त्रमें देवोंके १९८ भेद कहे हैं, उनको इस तरह समझना चाहियेः—भवनपतिके दस, चर ज्योतिष्कके पाँच, स्थिर ज्योतिष्कके पाँच, वैताढ्यपर रहनेवाले तिर्यक् जृम्भक देवोंके दस भेद, नरकके जीवोंको दुःख देनेवाले परमाधामीके पन्दरह भेद, व्यन्तरके आठ भेद, वानव्यन्तरके आठ भेद, किल्बिषियोंके तीन भेद, लोकान्तिकके नव भेद, बारह देवलोकोंके बारह भेद, नव ग्रैवेयकोंके नव भेद, पाँच अनुत्तरविमानोंके पाँच भेद, सब मिलाकर ९९ भेद हुए, इनके भी पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो भेद हैं, इस प्रकार १९८ भेद देवोंके होते हैं. मनुष्योंके ३०३ भेद पहले कह चुके।

अब तिर्यञ्चके ४८ भेद कहते हैंः—पाँच सूक्ष्म स्थावर, पाँच बादर स्थावर, एक प्रत्येक वनस्पतिकाय और तीन विकलेन्द्रिय सब मिलाकर चौदह हुए; ये चौदह पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो प्रकारके हैं, इस तरह अट्ठाईस हुए

जलचर, खेचर, तथा स्थलचरके तीन भेदः—चतुष्पद, उरःपरिसर्प तथा भुजपरिसर्प, ये प्रत्येक संमूर्च्छिम और गर्भज होनेसे दस भेद हुए; ये दसों पर्याप्त और अपर्याप्त रूपसे दो प्रकारके हैं, इसलिये बीस भेद हुए, इनमें पूर्वोक्त अट्ठाइस भेदोंके मिलानेपर तिर्यञ्चोंके ४८ भेद होते हैं।

नारक जीवोंके सात भेद कह चुके हैं, वे पर्याप्त तथा अपर्याप्त रूपसे दो तरहके हैं, इस तरह नारक जीवोंके चौदह भेद होते हैं. देवोंके १९८, मनुष्योंके ३०३, तिर्यञ्चोंके ४८ और नारकोंके १४ भेद, इन सबको मिलानेसे ५६३ भेद, संसारी जीवके हुए।

"अथ सिद्ध जीवोंके भेद कहते हैं."

**सिद्धा पनरसभेया, तित्थ-अतित्थाइ-सिद्ध भेएणं।**
**एए संखेवेणं, जीवविगप्पा समक्खाया ॥२५॥**

( तित्थ अतित्थाइ सिद्ध भेएणं ) तीर्थङ्कर-सिद्ध, अतीर्थङ्कर-सिद्ध आदि भेदोंसे, ( सिद्धा ) सिद्ध-जीवोंके ( पनरस भेया ) पन्दरह भेद हैं. ( संखेवेणं ) सङ्क्षेपसे, ( एए ) ये—पूर्वोक्त, ( जीवविगप्पा ) जीव-विकल्प—जीवोंके भेद, ( समक्खाया ) कहे गये ॥ २५ ॥

भावार्थ–तीर्थङ्कर-सिद्ध, अतीर्थङ्कर-सिद्ध आदि सिद्धोंके पन्द्रह भेद "नवतत्त्व" में कहे हैं, उसे देख लेना चाहिये. सङ्क्षेपमें जीवोंके भेद इस ग्रन्थमें कहे गये हैं.

---

" अब आगे जो कहना है उसे खुद ग्रन्थकार गाथा-द्वारा कहते हैं. "

**एएसिं जीवाणं, सरीरमाऊ–ठिई सकायंमि ।**
**पाणा जोणिपमाणं, जेसिं जं अत्थि तं भणिमो २६**

( एएसिं ) इन–पूर्वोक्त (जीवाणं) जीवोंके, ( सरीरं ) शरीर-प्रमाण, (आऊ) आयुः-प्रमाण, (सकायंमि) स्व-कायामें, ( ठिई ) स्थितिका प्रमाण अर्थात् स्वकायस्थिति-प्रमाण, ( पाणा ) प्राण-प्रमाण और ( जोणिपमाणं ) योनि-प्रमाण, ( जेसिं ) जिनके, ( जं अत्थि ) जितने हैं, ( तं ) उसे, ( भणिमो ) कहते हैं ॥ २६ ॥

भावार्थ–पहले एकेन्द्रिय आदि जीव कहे गये हैं, उनके शरीरका प्रमाण, आयुका प्रमाण, स्वकायस्थितिका प्रमाण—एकेन्द्रियादि जीवोंका मर कर फिर उसी कायमें पैदा होना, 'स्वकायस्थिति' कहलाता है उसका प्रमाण; प्राण-प्रमाण—दस प्राणोंमेंसे अमुक जीवको कितने प्राण हैं इसकी गिनती; योनि-प्रमाण—चौरासी लाख योनियोंमेंसे

किन किन जीवोंकी कितनी कितनी योनियाँ हैं इस विषय-की गिनती;—ये बातें आगे कही जायँगी.

"पहले, शरीर-प्रमाण कहते हैं."

**अंगुलअसंखभागो, सरीरमेगिंदियाण सव्वेसिं।**
**जोयणसहस्समहियं, नवरं पत्तेयरुक्खाणं ॥२७॥**

(सव्वेसिं) सम्पूर्ण (एगिंदियाण) एकेन्द्रियोंका (सरीरं) शरीर (अंगुलअसंखभागो) उँगलीके असंख्यातवें भाग जितना है, (नवरं) लेकिन (पत्तेयरुक्खाणं) प्रत्येक वन-स्पतियोंका शरीर, (जोयणसहस्समहियं) हजार, योजनसे कुछ अधिक है ॥ २७ ॥

भावार्थ—सूक्ष्म तथा बादर पृथ्वीकाय आदि एके-न्द्रिय जीवोंका शरीर-प्रमाण, उँगलीके असंख्यातवें भाग जितना है, लेकिन प्रत्येक वनस्पतिकायके जीवोंका शरीर-प्रमाण, हजार योजनसे कुछ अधिक है; यह प्रमाण समुद्रके पद्मनालका तथा ढाई द्वीपसे बाहरकी लताओंका है.

"अब द्वीन्द्रिय आदि विकलेन्द्रिय जीवोंका शरीर-प्रमाण कहते हैं."

**बारस जोयण तिन्नेव गाउआ जोयणं च अणुकमसो।**

बेइंदिय तेइंदिय,
चउरिंदिय देहमुच्चत्तं ॥ २८ ॥

(वेइंदिय) द्वीन्द्रिय, (तेइंदिय) त्रीन्द्रिय और (चउरिंदिय) चतुरिन्द्रिय जीवोंके, (देहमुच्चत्तं) शरीरका प्रमाण, (अणुकमसो) क्रमसे (वारस जोयण) वारह योजन, (तिन्नेव गाउआ) तीन गव्यूत–तीन कोस–और (जोयणं) एक योजन है ॥ २८ ॥

भावार्थ–द्वीन्द्रिय जातिके जीवोंका शरीर-प्रमाण, अधिकसे अधिक, वारह योजन हो सकता है, इससे अधिक नहीं। इसका मतलव किसी द्वीन्द्रिय जातिसे है, कुल द्वीन्द्रियोंसे नहीं; ऐसा ही त्रीन्द्रिय जीवोंका शरीर-प्रमाण तीन कोस और चतुरिन्द्रिय जीवोंका शरीर-प्रमाण एक योजन है.

प्र०–योजन किसे कहते हैं ?

उ०–चार कोसका एक योजन होता है.

प्र०–गव्यूत किसे कहते हैं ?

उ०–एक कोसको.

" अव नारक-जीवोंका शरीर-प्रमाण कहते हैं."

धणुसयपंचपमाणा, नेरइया सत्तमाइपुढवीए।
तत्तो अद्धद्धूणा, नेया रयणप्पहा जाव ॥२९॥

( सत्तमाइ ) सातवीं ( पुढवीए ) पृथ्वीके ( नेरइया ) नारक-जीव, ( धणुसयपंचपमाणा ) पाँचसौ धनुप प्रमाणके हैं, (रयणप्पहा जाव) रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथ्वीतक, (तत्तो) उससे (अद्धद्धूणा) आधा २ कम प्रमाण (नेया) समझना ॥२९॥

भावार्थ—सातवें नरकके जीवोंका शरीर-प्रमाण पाँचसौ धनुष, छट्ठे नरकके जीवोंका शरीर-प्रमाण ढाइसौ धनुष, पाँचवें नरकके जीवोंका एकसौ पच्चीस धनुष, चौथे नरकके जीवोंका साढ़े बासठ धनुष, तीसरे नरकके जीवोंका सवा इकतीस धनुष, दूसरे नरकके जीवोंका साढ़े पन्द्रह धनुष और बारह अङ्गुल, तथा प्रथम नरकके जीवोंका शरीर-प्रमाण पौने आठ धनुष और छह अङ्गुल है. नारकोंके उत्तरवैक्रिय शरीरका प्रमाण, उक्त प्रमाणसे दुगुना समझना चाहिये.

प्र०—धनुषका प्रमाण क्या है ?

उ०—चार हाथका एक धनुष समझना चाहिये.

"पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंका शरीर-प्रमाण."

जोयणसहस्समाणा, मच्छा उरगा य गब्भया हुंति
धणुअपुहुत्तं पक्खिसु, भुयचारी गाउअपुहुत्तं ।३०।
खयरा धणुअपुहुत्तं,भुयगा उरगा य जोयणपुहुत्तं।
गाउअपुहुत्तमित्ता,समुच्छिमा चउप्पया भणिया३१

(गब्भया) गर्भज (मच्छा) मत्स्य-मछलियाँ, (य) और (उरगा) साँप आदि, अधिकसे अधिक (जोयणसहस्समाणा) हजार योजन प्रमाणवाले (हुंति)होते हैं.(पक्खिसु)पक्षियोंमें शरीर प्रमाण (धणुअपुहुत्तं) धनुप-पृथक्त्व है तथा (भुयचारी) भुज-चारी-भुजाओंसे चलनेवाले ( गाउअपुहुत्तं ) गव्यूत-पृथक्त्व-प्रमाण शरीरके होते हैं ॥ ३० ॥

( समुच्छिमा ) सम्मूर्च्छिम ( खयरा ) खेचर जीव (भुयगा) और भुजाओंसे चलनेवाले जीव ( धणुअपुहुत्तं ) धनुप-पृथक्त्व-प्रमाणवाले होते हैं (य) और ( उरगा ) साँप आदि ( जोयण पुहुत्तं ) योजन-पृथक्त्व शरीर-प्रमाणके होते हैं. (चउप्पया) चतुष्पद जीव (गाउअपुहुत्तमित्ता) गव्यू-त-पृथक्त्वमात्र (भणिया) कहे गये हैं ॥ ३१ ॥

भावार्थ–गर्भज मत्स्य और सर्पका शरीर-मान एक हजार योजनका है; इस प्रकारके मत्स्य स्वयम्भूरमण समुद्रमें होते हैं तथा सर्प मनुष्य-क्षेत्रसे बाहर होते हैं. गर्भज पक्षिओं-का शरीर-मान धनुष-पृथक्त्व है अर्थात् दो धनुषसे लेकर नव धनुप तक है. गर्भज न्योला, गोह आदि भुजपरिसर्प जीवोंका शरीर-मान, गव्यूत-पृथक्त्व है अर्थात् दो कोससे लेकर नव कोस तक है.

सम्मूर्च्छिम खेचर तथा भुजपरिसर्प जीवोंका शरीर-मान, धनुप-पृथक्त्व है. सम्मूर्च्छिम उरःपरिसर्प जीवोंका

शरीर-मान, योजन-पृथक्त्व है, सम्मूर्च्छिम चतुष्पद—चार पैर-वाले—जीवोंका शरीर-मान गव्यूत-पृथक्त्व है.

प्र०—पृथक्त्व किसको कहते हैं?

उ०—दोसे लेकर नव तककी संख्याको पृथक्त्व कहते हैं.

---

"गर्भज चतुष्पद तिर्यञ्च तथा मनुष्यका शरीर-मान."

**छच्चेव गाउआइं, चउप्पया गब्भया मुणेयव्वा।**
**कोसतिगं च मणुस्सा, उक्कोससरीरमाणेणं॥३२॥**

(चउप्पया गब्भया) चतुष्पद गर्भजोंका शरीर-मान (छच्चेव गाउआइं) छह कोसका (मुणेयव्वा) जानना (च) और (मणुस्सा) मनुष्य (उक्कोससरीरमाणेणं) उत्कृष्ट शरीर-मानसे (कोसतिगं) तीन कोसके होते हैं ॥ ३२ ॥

भावार्थ—देवकुरु आदि क्षेत्रोंमें चतुष्पद गर्भज हाथीका शरीर-मान छह कोसका है तथा देवकुरु आदिके युगली मनुष्योंके शरीरकी ऊँचाई, अधिकसे अधिक तीन कोसकी होती है.

---

"देवोंका स्वाभाविक शरीर-मान."

**ईसाणंत सुराणं,**
**रयणीओ सत्त हुंति उच्चत्तं।**

दुग-दुग-दुग-चउ-गेवि,-
ज्जणुत्तरे इक्कि परिहाणी ॥ ३३ ॥

(ईसाणंत) ईशानान्त---ईशान देवलोक तकके (सुराणं) देवताओंकी (उच्चत्तं) ऊँचाई (सत्त) सात (रयणीओ) रत्नि-हाथ (हुंति) होती है; (दुग-दुग-दुग-चउ गेवि-ज्जणुत्तरे) दो, दो, दो, चार, नवग्रैवेयक और पाँच अनुत्तरविमानोंके देवोंका शरीर-मान (इक्कि परिहाणी) एक एक हाथ कम है ॥ ३३ ॥

भावार्थ---दूसरा देवलोक, ईशान है, वहाँके देवोंका तथा भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म देवोंका शरीर सात हाथ ऊँचा है; सनत्कुमार और माहेन्द्रके देवोंका शरीर छह हाथ ऊँचा है; ब्रह्म और लान्तकके देवोंका पाँच हाथ; शुक्र और सहस्रारके देवोंका चार हाथ; आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन चार देवलोकोंके देवोंका तीन हाथ; नवग्रैवेयकके देवोंका दो हाथ और पाँच अनुत्तर विमानवासी देवोंका एक हाथ ऊँचा है.

यहाँ जीवोंका शरीर-मान उत्सेधाङ्गुलसे समझना चाहिये.

प्रश्न---उत्सेधाङ्गुल किसको कहते हैं ?

उ०---आठ यवोंका-जवोंका-एक उत्सेधाङ्गुल होता है.

" अब आयु-प्रमाण कहते हैं. "

**वावीसा पुढवीए, सत्तय आउस्स तिन्नि वाउस्स।**
**वास सहस्सा दस तरु, गणाण तेऊ तिरत्ताऊ ३४**

(पुढवीए) पृथ्वीकाय जीवोंकी आयु (वावीसा) बाईस हजार वर्षकी है (आउस्स) अप्काय जीवोंकी आयु (सत्तय) सात हजार वर्षकी ( वाउस्स ) वायुकाय जीवोंकी आयु ( तिन्नि ) तीन हजार वर्षकी (तरुगणाण) प्रत्येक वनस्पति-कायके जीव-समुदायकी आयु ( वास सहस्सा दस ) वर्ष-सहस्र-दश अर्थात् दस हजार वर्षकी ( तेऊ ) तेजःकाय जीवोंकी ( तिरत्ताऊ ) तीन अहोरात्रकी आयु है ॥३४॥

भावार्थ—पृथ्वीकाय जीवोंकी अधिकसे अधिक आयु—उत्कृष्ट आयु—बाईस हजार वर्ष; अप्काय जीवोंकी आयु सात हजार वर्ष; वायुकाय जीवोंकी तीन हजार वर्ष; प्रत्येक वनस्पतिकाय जीवोंकी दस हजार वर्ष और तेजःकाय जीवोंकी तीन अहोरात्र आयु है. यह तो हुई उत्कृष्ट आयु, लेकिन जघन्य आयु सबकी अन्तर्मुहूर्तकी है.

"द्वीन्द्रिय आदि जीवोंका आयु-प्रमाण."

**वासाणि वारसाऊ, बिइंदियाणं तिइंदियाणं तु ।**
**अउणा पन्न दिणाइ, चउरिंदीणं तु छम्मासा ।३५।**

(विइंदियाणं) द्वीन्द्रिय जीवोंकी (आउ) आयु (वारस) वारह (वासाणि) वर्षकी है, (तिइंदियाणं तु) त्रीन्द्रिय जीवोंकी तो ( अउणा पन्न दिणाइ ) उनंचास दिनकी आयु होती है (चउरिंदीणं तु) और चउरिन्द्रिय जीवोंकी आयु (छम्मासा) छह महीनेकी है ॥ ३५ ॥

**भावार्थ**—द्वीन्द्रिय जीवोंकी उत्कृप्ट आयु वारह वर्षकी, त्रीन्द्रियोंकी उनंचास दिनकी और चतुरिन्द्रियकी छह महीनेकी है. यह सवकी उत्कृष्ट आयु है, जघन्य आयु अन्तर्मुहूर्तकी समझना चाहिये.

" चार प्रकारके पञ्चेन्द्रिय जीवोंकी उत्कृष्ट आयु तीन गाथाओंसे कहते हैं. "

## सुर-नेरइयाण ठिई, उक्कोसा सागराणि तित्तीसं। चउपय-तिरिय-मणुस्सा, तिन्निय पलिओवमा हुंति

( सुर-नेरइयाण ) देव और नारक जीवोंकी (उक्कोसा) उत्कृष्ट—अधिकसे अधिक (ठिई) स्थिति—आयु ( सागराणि तित्तीसं ) तेतीस सागरोपम है, ( चउपय-तिरिय ) चार पैरवाले तिर्यञ्च और (मणुस्सा) मनुष्योंकी आयु (तिन्निय) तीन ( पलिओवमा ) पल्योपम ( हुंति ) है ॥ ३६ ॥

**भावार्थ**—देव और नरकवासी जीव, अधिकसे अधिक, तेतीस सागरोपम तक जीते हैं और चतुष्पद तिर्यञ्च तथा

मनुष्य तीन पल्योपम तक; ये तिर्यञ्च तथा मनुष्य देवकुरु आदि क्षेत्रोंके समझना चाहिये. देव तथा नारक जीवोंकी जघन्य आयु—कमसे कम आयु—दस हजार वर्षकी है; मनुष्य तथा तिर्यञ्च जीवोंकी जघन्य आयु, अन्तर्मुहूर्तकी है.

**जलयर-उरभुयगाणं, परमाऊ होइ पुव्वकोडीऊ।**
**पक्खीणं पुण भणिओ, असंखभागो अ पलियस्स**

( जलयर–उरभुयगाणं ) जलचर, उरःपरिसर्प और भुजपरिसर्प जीवोंकी (परमाऊ) उत्कृष्ट आयु (पुव्वकोडीऊ) एक करोड़ पूर्व है, ( पक्खीणं पुण ) पक्षियोंकी आयु तो ( पलियस्स ) पल्योपमका ( असंखभागो ) असंख्यातवाँ भाग जितनी ( भणिओ ) कही है ॥ ३७ ॥

**भावार्थ**—गर्भज और सम्मूर्च्छिम ऐसे दो प्रकार-के जलचर जीवोंकी तथा गर्भज, उरःपरिसर्प और भुजपरि-सर्प जीवोंकी उत्कृष्ट आयु एक करोड़ पूर्व है; गर्भज पक्षियों-की आयु पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग जितनी है.

**सव्वे सुहुमा साहा,—**
**रणा य संमुच्छिमा मणुस्सा य ।**
**उक्कोस जहन्नेणं,**
**अंतमुहुत्तं चिय जियंति ॥३८॥**

( सव्वे ) सम्पूर्ण ( सुहुमा ) पृथ्वीकाय आदि सूक्ष्म ( य ) और ( साँहारणा ) साधारण वनस्पतिकाय ( य ) और ( संमुच्छिमा मणुस्सा ) संमूर्च्छिम मनुष्य ( उक्कोस जहन्नेणं ) उत्कृष्ट और जघन्यसे (अंतमुहुत्तं चिय) अन्त-र्मुहूर्त ही ( जियंति ) जीते हैं ॥ ३८ ॥

भावार्थ—सूक्ष्म पृथ्वीकाय आदि जीव, सूक्ष्म और बादर साधारण वनस्पतिकायके जीव और सम्मूर्छिम मनुष्य, उत्कर्षसे और जघन्यसे सिर्फ अन्तर्मुहूर्त तक जीते हैं.

प्रश्न—पल्योपम किसको कहते हैं ?

उ०—असंख्य वर्षोंका एक पल्योपम होता है.

प्र०—सागरोपम किसे कहते हैं ?

उ०—दस क्रोड़ा क्रोड़ी पल्योपमका एक सागरोपम होता है.

प्र०—पूर्व किसको कहते है ?

उ०—सत्तर लाख, छप्पन हजार करोड़ वर्षोंका एक पूर्व होता है.

**ओगाहणाउमाणं, एवं संखेवओ समक्खायं ।**
**जे पुण इत्थ विसेसा, विसेस सुत्ताउ ते नेया॥३९॥**

(एवं) इस प्रकार (ओगाहणाउमाणं) अवगाहना-शरीर और आयुका मान (संखेवओ) सङ्क्षेपसे (समक्खायं) कहा गया (जे पुण इत्थ) यहाँ जो बातें (विसेसा) विशेष हैं, (विसेस सुत्ताउ) विशेष सूत्रोंसे (ते) उनको (नेया) जानना ॥३९॥

भावार्थ—देह-मान तथा आयु-मानके विषयमें विशेष बातें जानना हों, तो "संग्रहणी", "प्रज्ञापना" आदि सूत्रोंसे जानना चाहिये.

---

"अब स्वकायस्थिति-द्वार कहते हैं."

**एगिंदिया य सव्वे, असंख उस्सप्पिणी सकायंमि**
**उववज्जंति चयंति अ, अणंतकाया अणंताओ ।४०।**

( सव्वे ) सब ( एगिंदिया ) एकेन्द्रिय जीव ( असंख उस्सप्पिणी ) असंख्य उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी तक (सकायंमि) अपनी कायामें (उववज्जंति) उत्पन्न होते हैं (अ) और (चयंति) मरते हैं; (अणंतकाया) अनन्तकाय जीव (अणंताओ) अनन्त उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी तक ॥ ४० ॥

भावार्थ—पृथ्वी, अप्, तेज, वायु और वनस्पतिकायके जीव, उसी पृथ्वी आदिकी अपनी कायामें, असंख्य उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी तक पैदा होते तथा मरते हैं; अनन्तकायके जीव तो उसी अपनी कायामें अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी तक पैदा होते तथा मरते हैं.

प्र०—उत्सर्पिणी किसको कहते हैं ?

उ०—दस क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपमकी एक उत्सर्पिणी तथा उतनेकी ही एक अवसर्पिणी होती है.

---

"द्वीन्द्रिय आदि जीवोंकी स्वकाय-स्थिति."

**संखिज्जसमा विगला,**
**सत्तट्ठ भवा पणिंदि-तिरि-मणुया ।**
**उववज्जंति सकाए,**
**नारय देवा अ नो चेव ॥ ४१ ॥**

(विगला) विकलेन्द्रिय जीव (संखिज्जसमा) संख्यात वर्षों तक (सकाए) अपनी कायोंमें (उववज्जंति) पैदा होते हैं, (पणिंदि-तिरि-मणुया) पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्य (सत्तट्ठ भवा) सात-आठ भव तक, लेकिन (नारय देवा) नारक और देव (नो चेव) नहीं ॥ ४१ ॥

भावार्थ–द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीव, स्वकायामें संख्यात वर्षों तक पैदा होते तथा मरते हैं; पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च तथा मनुष्य लगातार सात तथा आठ भव करते हैं अर्थात् मनुष्य, लगातार सात-आठ वार, मनुष्य-शरीर धारण कर सकता है, इस प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च भी. लेकिन देवता तथा नारक जीव मरकर फिर तुरन्त अपनी योनिमें नहीं पैदा होते अर्थात् देव मरकर फिर तुरन्त देव-योनिमें नहीं पैदा हो सकता । इस प्रकार नारक जीव मरकर तुरन्त नरकमें नहीं पैदा होता। हाँ, एक दो जन्म दूसरी गति-योंमें बिताकर फिर देव या नरक-योनिमें पैदा हो सकते हैं.

इसी तरह देव मरकर तुरन्त नरक-योनिमें नहीं जाता और नारक जीव मरकर तुरन्त देव-योनिमें नहीं पैदा हो सकता.

"अब प्राण-द्वार कहते हैं."

**दसहा जियाण पाणा,**
**इंदि-उसासाउ-जोगबलरूवा ।**
**एगिंदिएसु चउरो,**
**विगलेसु छ सत्त अट्ठेव ॥४२॥**

(जियाण) जीवोंको (दसहा) दस प्रकार के (पाणा) प्राण होते हैं;–(इंदि-उसासाउ-जोगबलरूवा) इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, आयु और योगबलरूप, (एगिंदिएसु) एकेन्द्रियोंको (चउरो) चार प्राण हैं, (विगलेसु) विकलेन्द्रियोंको (छ सत्त अट्ठेव) छह, सात और आठ ॥४२॥

भावार्थ—प्राणोंकी संख्या दस है;–पाँच इन्द्रियाँ, श्वासोच्छ्वास, आयु, मनोबल, वचनबल और कायबल. इन दस प्राणोंमेंसे चार—त्वचा, श्वासोच्छ्वास, आयु और कायबल एकेन्द्रिय जीवोंको होते हैं; द्वीन्द्रिय जीवोंको छह प्राण—त्वचा, रसना (जीभ), श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल और वचनबल; त्रीन्द्रिय जीवोंको सात प्राण—त्वचा, जीभ, नाक, श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल और वचनबल; चतुरिन्द्रिय जीवोंको आठ प्राण—पूर्वोक्त सात, और आँख.

असन्नि-सन्नि-पंचिं,-
दिएसु नव दस कमेण बोधव्वा ।
तेहिं सह विप्पओगो,
जीवाणं भणए मरणं ॥ ४३ ॥

( असन्नि-सन्नि-पंचिंदिएसु ) असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवोंको ( कमेण ) क्रमसे ( नव दस ) नव और दस प्राण ( बोधव्वा ) समझना. ( तेहिं सह ) उनके साथ (विप्पओगो) विप्रयोग—वियोग, (जीवाणं) जीवोंका (मरणं) मरण ( भण्णए ) कहलाता है ॥ ४३ ॥

भावार्थ—असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंको त्वचा, जीभ, नाक, आँख, कान, श्वासोच्छ्वास, आयु, कायबल और वचनबल ये नव प्राण होते हैं और संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंको पूर्वोक्त नव और मनोबल, ये दस प्राण होते हैं. जिनको जितने प्राण कहे गये हैं, उन प्राणोंके साथ वियोग होना ही उन जीवोंका मरण कहलाता है. देव, नारक, गर्भज तिर्यञ्च तथा गर्भज मनुष्य, ये संज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते हैं. सम्मूर्च्छिम तिर्यञ्च और सम्मूर्च्छिम मनुष्य, असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते हैं. सम्मूर्च्छिम मनुष्योंको मनोबल और वाक्बल नहीं है, इसलिये उनके आठ प्राण, और, श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण न होनेके कारण सात प्राण होते हैं.

" जीवोंका प्राण-वियोग-रूप मरण कितने वार
हुआ है, सो कहते हैं."

**एवं अणोरपारे, संसारे सायरंमि भीमंमि ।**
**पत्तो अणंतखुत्तो, जीवेहिं अपत्तधम्मेहिं ॥ ४४ ॥**

(अपत्तधम्मेहिं) नहीं पाया है धर्म जिन्होंने ऐसे (जीवेहिं) जीवोंने ( अणोरपारे ) आर-पार-रहित--आदि-अन्त-रहित (भीमंमि) भयङ्कर (संसारे सायरंमि) संसाररूप समुद्रमें (एवं) इस प्रकार---प्राण-वियोग-रूप मरण (अणंतखुत्तो) अनन्त वार ( पत्तो ) प्राप्त किया ॥ ४४ ॥

भावार्थ---संसारका आदि नहीं है, न अन्त है; अनन्तवार जीव मर चुके हैं और आगे मरेंगे. सुदैवसे यदि उन्हें धर्मकी प्राप्ति हुई तो जन्म-मरणसे छुटकारा होगा.

"अब योनि-द्वार कहते हैं. "

**तह चउरासी लक्खा,**
**संखा जोणीण होइ जीवाणं ।**
**पुढवाईण चउण्हं,**
**पत्तेयं सत्त सत्तेव ॥ ४५ ॥**

( जीवाणं ) जीवोंकी (जोणीण) योनियोंकी (संखा) सङ्ख्या ( चउरासी लक्खा ) चौरासी लाख ( होइ ) है.

( पुढवाईण चउण्हं ) पृथ्वीकाय आदि चारकी प्रत्येककी योनि-सङ्ख्या ( सत्त सत्तेव ) सात सात लाख हैं ॥४५॥

भावार्थ—जीवोंकी चौरासी लाख योनियाँ हैं, यह बात प्रसिद्ध है। उसको इस प्रकार समझना चाहियेः—पृथ्वी-कायकी सात लाख, अप्‌कायकी सात लाख, तेजःकायकी सात लाख और वायुकायकी सात लाख योनियाँ हैं; सब-को मिला कर अट्ठाईस लाख हुईं.

प्रश्न—योनि किसको कहते हैं ?

उ०—पैदा होनेवाले जीवोंके जिस उत्पत्ति-स्थानमें वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श, ये चारों समान हों, उस उत्पत्ति-स्थानको उन सब जीवोंकी एक योनि कहते हैं.

**दस पत्तेयतरूणं,**
**चउदस लक्खा हवंति इयरेसु ।**
**विगलिंदिएसु दो दो,**
**चउरो पंचिंदितिरियाणं ॥ ४६ ॥**

( पत्तेयतरूणं ) प्रत्येक वनस्पतिकायकी ( दस ) दस लाख योनियाँ हैं, ( इयरेसु ) प्रत्येक वनस्पतिकायसे इतर—साधारण वनस्पतिकायकी ( चउदस लक्खा ) चौदह लाख ( हवंति ) हैं; ( विगलिंदिएसु ) विकलेन्द्रियोंकी ( दो

दो ) दो दो लाख हैं, (पंचिंदितिरियाणं) पञ्चेन्द्रिय तिर्य-ञ्चोंकी ( चउरो ) चार लाख हैं ॥ ४६ ॥

भावार्थ—प्रत्येक वनस्पतिकायकी दस लाख; साधारण वनस्पतिकायकी चौदह लाख; द्वीन्द्रियकी दो लाख; त्रीन्द्रियकी दो लाख; चतुरिन्द्रियकी दो लाख और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंकी चार लाख योनियाँ हैं.

**चउरो चउरो नारय,-**
**सुरेसु मणुआण चउदस हवंति ।**
**संपिंडिया य सव्वे,**
**चुलसी लक्खाउ जोणीणं ॥ ४७ ॥**

( नारय सुरेसु ) नारक और देवोंकी (चउरो चउरो) चार चार लाख योनियाँ हैं; ( मणुआण ) मनुष्योंकी ( चउदस ) चौदह लाख ( हवंति ) हैं; ( सव्वे ) सब ( संपिंडिया ) इकट्ठी की जायँ—मिलाई जायँ तो (जोणीणं) योनियोंकी सङ्ख्या ( चुलसी लक्खाउ ) चौरासी लाख होती है ॥ ४७ ॥

भावार्थ—नारक जीवोंकी चार लाख, देवोंकी चार लाख और मनुष्योंकी चौदह लाख योनियाँ हैं. योनियोंकी सब संख्या मिलानेपर चौरासी लाख होती है.

"अब सिद्ध जीवोंके विषयमें कहते हैं."

**सिद्धाणा नत्थि देहो,**

**न आउ कम्मं न पाण जोणीओ ।**

**साइ-अणंता तेसिं,**

**ठिई जिणिंदागमे भणिया ॥ ४८ ॥**

( सिद्धाण ) सिद्ध जीवोंको ( देहो ) शरीर ( नत्थि ) नहीं है, ( न आउ कम्मं ) आयु और कर्म नहीं है, ( न पाण जोणीओ ) प्राण और योनि नहीं है, ( तेसिं ) उनकी ( ठिई ) स्थिति ( साइ अणंता ) सादि और अनन्त है; यह बात ( जिणिंदागमे) जैन सिद्धान्तमें (भणिया) कही गई है।

**भावार्थ**–सिद्ध जीवोंको शरीर नहीं है इसलिये आयु और कर्म भी नहीं है, आयुके न होनेसे प्राण और योनि भी नहीं है, प्राणके न होनेसे मृत्यु भी नहीं है; उनकी स्थिति सादि-अनन्त है अर्थात् जब वे लोकके अग्र भागपर अपने स्वरूपमें स्थित हुए, वह समय उनकी स्वरूप-स्थितिका आदि है तथा फिर वहाँसे च्युत होना नहीं है इसलिये स्वरूप-स्थिति अनन्त है; यह बात जैन सिद्धान्तमें कही गई है.

---

"फिरसे संसारी जीवोंका स्वरूप कहते हैं"

**काले अणाइनिहणे, जोणीगहणंमि भीसणे इत्थ।**

**भमिया भमिहिंति चिरं, जीवा जिणवयणमलहंत**

( अणाइ निहणे ) आदि और अन्त-रहित अर्थात् अनादि-अनन्त ( काले ) कालमें ( जिणवयणं ) जिनेन्द्र भगवान्के उपदेशरूप वचनको ( अलहंता ) न पाये हुए ( जीवा ) जीव; ( जोणी गहणंमि ) योनियोंसे क्लेशरूप ( भीसणे ) भयङ्कर ( इत्थ ) इस संसारमें ( चिरं ) वहुत काल तक ( भमिया ) भ्रमण कर चुके और ( भमिहिंति ) भ्रमण करेंगे ॥ ४९ ॥

**भावार्थ**—चौरासी लाख योनियोंके कारण दुःख-दायक तथा भयङ्कर इस संसारमें, जिनेन्द्र भगवान्के वत-लाये हुए मार्गको न पाये हुए जीव, अनादि कालसे जन्म-मरणके चक्करमें फँसे हुए हैं तथा अनन्त कालतक फँसे रहेंगे.

" अब ग्रन्थकार अपना नाम सूचित करते हुए
धर्म्मोपदेश देते हैं. "

**ता संपइ संपत्ते, मणुअत्ते दुलहे वि सम्मत्ते ।**
**सिरिसंतिसूरिसिट्ठे,करेह भो उज्जमं धम्मे ।५०।**

( ता ) इसलिये ( संपइ ) इस समय ( दुलहे ) दुर्लभ ( मणुअत्ते ) मनुजत्व—मनुष्यजन्म और ( सम्मत्ते ) सम्यक्त्व ( संपत्ते ) प्राप्त हुआ है तो ( सिट्ठे ) शिष्ट—सज्जन पुरुषोंसे सेवित ऐसे ( धम्मे ) धर्ममें (भो) अय प्राणियो ! ( उज्जमं ) उद्यम—पुरुषार्थ ( करेह ) करो, ऐसा ( सिरि-संतिसूरि ) श्रीशान्तिसूरि उपदेश देते हैं ॥ ५० ॥

भावार्थ—जब कि संसार भयङ्कर है और चौरासी लाख योनियोंके कारण उससे पार पाना मुश्किल है और उचित सामग्री—मनुष्य-जन्म और सम्यक्त्व—सच्ची श्रद्धा—भी प्राप्त हुई है इसलिये हे भव्य जीवो ! प्रमाद न करके, महापुरुषोंने जिस धर्मका सेवन किया है उसका तुम भी सेवन करो; क्योंकि विना धर्मकी सेवा किये तुम जन्म-मरणके जञ्जालसे नहीं छूट सकोगे ।

"इस ग्रन्थमें जो कुछ जीवोंके स्वरूपके विषयमें कहा गया है वह सिद्धान्तके अनुसार है"

**एसो जीववियारो, संखेवरुईण जाणणाहेउं ।**
**संखित्तो उद्धरिओ, रुद्दाओ सुयसमुद्दाओ ।५१।**

( संखेवरुईण ) सङ्क्षेपरुचियोंके—अल्पमतियोंके ( जाणणा हेउं ) जाननेकेलिये ( रुद्दाओ ) रुद्र—अतिविस्तृत ( सुयसमुद्दाओ ) श्रुतसमुद्रसे ( एसो ) यह (जीववियारो) जीवविचार ( संखित्तो ) सङ्क्षेपसे ( उद्धरिओ ) निकाला गया ॥ ५१ ॥

भावार्थ—सिद्धान्तोंमें जीवोंके भेद आदि विस्तारसे कहे गये हैं इसलिये अल्प बुद्धिवाले लाभ नहीं उठा सकते; उनके जाननेकेलिये सङ्क्षेपमें यह "जीवविचार" सिद्धान्तके अनुसार बनाया गया है, इसके बनानेमें अपनी कल्पनाको स्थान नहीं दिया गया ।

जीवविचार समाप्त ।